ईल का अद्भुत सफर

अरविंद गुप्ते

कई जन्तुओं का व्यवहार अचंभित कर देने वाला होता है। प्रवासी पक्षी प्रति वर्ष हज़ारों किलोमीटर की यात्रा बिना रास्ता भटके कर लेते हैं, मधुमक्खियों और दीमकों की एक सामाजिक संरचना होती है जिसमें नियमों का पालन कड़ाई से किया जाता है। मधुमक्खी के छत्ते के षटकोणीय कोषों की हर भुजा इतनी बराबर होती है मानो किसी अत्यन्त संवेदनशील मापन यंत्र से नापकर बनाई गई हो, और न जाने क्या-क्या। किन्तु जन्तुओं का यह व्यवहार उनकी बुद्धिमत्ता के कारण न होकर उनकी सहज बुद्धि (instinct) के कारण होता है। इस प्रकार के उदाहरणों में एक बड़ा ही आश्चर्यजनक व्यवहार ईल नामक मछली का होता है। ईल मछलियां संसार के लगभग सभी भागों में पाई जाती हैं। इनका शरीर सांप के समान लंबा होता है और शरीर पर छोटे-छोटे शल्क पाए जाते हैं। अतः काफी समय तक लोग इन्हें एक प्रकार का सांप ही मानते थे।

यूरोप के नदी-नालों में रहने वाली ईल मछलियां, जिनकी प्रजाति का जीवशास्त्रीय नाम Anguilla anguilla है, प्रतिवर्ष लाखों की संख्या में, समुद्र की ओर जाती हुई दिखाई देती हैं। इस बात से यूरोपवासी परिचित तो थे, किन्तु ईल कहां जाती हैं और अगर जाती हैं तो नदी-नालों में इनकी संख्या ज्यों की त्यों कैसे बनी रहती है, यह बात किसी की समझ में नहीं आ रही थी। ग्रीस (यूनान) के दार्शनिक अरस्तु जीवशास्त्र सहित कई विषयों में दखल

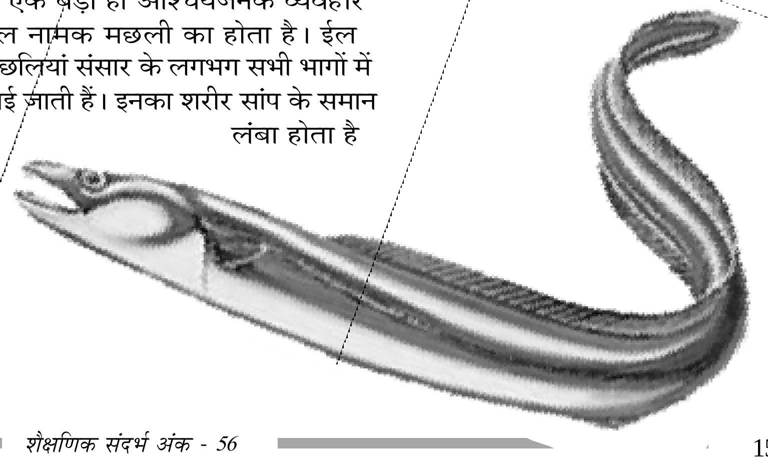

रखते थे। उन्होंने सबसे पहले ईल का गहराई से अध्ययन किया और वे इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि ईल गीली मिट्टी से अपने आप, बिना निषेचन यानी फर्टि-लाइज़ेशन के पैदा होने वाला जीव है। अरस्तु के कई गलत निष्कर्षों में यह भी एक था, किन्तु सदियों तक लोग इसे सही मानते रहे क्योंकि ईल के जीवन-चक्र के बारे में कोई जानकारी ही नहीं थी। सन् 1777 में इटली के जीवशास्त्री कार्लो मोंडिनी ने ईल का विच्छेदन करके उसके प्रजनन अंग देखे और वे इस नतीजे पर पहुंचे कि ईल एक मछली है।

यह भी देखा गया था कि जहां वयस्क ईल मछलियां प्रतिवर्ष बड़ी संख्या में समुद्र की ओर जाती हैं, वहीं कुछ चपटी मछलियां समुद्र से किनारों की ओर बढ़ती दिखाई देती थीं। मछलियों की इस प्रजाति को Leptocephalus brevirostris (चपटे सिर वाला, छोटी नाक वाला) नाम दिया गया। 1893 में इटली के ही जीवशास्त्री गियोवानी बटिस्टा ग्रासी ने यह देखा कि यह चपटी मछली धीरे-धीरे एक गोल, वयस्क ईल में बदल जाती है। इस प्रकार इन चपटे महाशय की असलियत का पता चला कि वे अलग प्रजाति न होकर ईल के लार्वा ही हैं। यह एक रोचक बात है कि इसके बाद भी ईल के लार्वा को लेप्टोसिफॅलस ही कहा जाता है।

मछलियां या तो समुद्र के खारे पानी में रह सकती हैं या फिर नदी-तालाब के मीठे पानी में। यदि समुद्र की मछली को मीठे पानी में छोड़ा जाए तो वह मर जाती है। इसी प्रकार, मीठे पानी की मछली समुद्र में जीवित नहीं रह सकती। किन्तु ईल उन गिनी-चुनी मछलियों में है जो दोनों प्रकार के पानी में जीवित रह सकती हैं। किन्तु इसका मतलब यह नहीं कि ईल अपनी मर्जी के अनुसार चाहे जब समुद्र से नदी में और नदी से समुद्र में जा सकती है। इन मछलियों के शरीर में प्रजनन के समय कुछ ऐसे परिवर्तन होते हैं जिनके कारण ये पानी में नमक की मात्रा में परिवर्तन को सहन कर सकती हैं।

यह तो पता चल गया कि ईल मछलियां समुद्र में कहीं प्रजनन करने के लिए जाती हैं, किन्तु कहां जाती हैं यह एक पहेली बनी हुई थी। इस पहेली को हल करने का बीड़ा उठाया डेनमार्क के वैज्ञानिक योहानेस श्मिट ने। उन्होंने1904 से लगातार कई खोजी अभियान अटलांटिक महासागर में भेजे। जहाज पर सवार वैज्ञानिक यूरोप के

ईल का लेप्टोसिफॅलस लार्वा

किनारे से पश्चिम की ओर यानी अमेरिका की ओर समुद्र में पाए जाने वाले लेप्टोसिफॅलस लार्वा के नमूने लेते हुए बढ़ते थे और उनकी नाप लेते जाते थे। आखिर 1922 में उन्हें यूरोप के किनारे से लगभग पांच से छः हज़ार किलोमीटर और अमेरिका के पूर्वी किनारे से लगभग दो हज़ार किलोमीटर की दूरी पर सबसे छोटे लेप्टोसिफॅलस लार्वा मिले। इससे यह पता चला कि ईल मछलियों के प्रजनन का स्थान वहीं कहीं आसपास था। अटलांटिक महासागर के इस भाग को सरगासो समुद्र कहते हैं क्योंकि यहां हज़ारों वर्ग किलोमीटर के समुद्र में सरगासम(Sargassum) नामक विशाल समुद्री वनस्पति फैली हुई है।

सरगासो समुद्र

अटलांटिक महासागर के सबसे गहरे भाग के लगभग बीस लाख वर्ग किलोमीटर के एक क्षेत्र में सरगासम शैवाल फैली हुई है। स्वाभाविक ही है कि इस वनस्पति की जड़ें नहीं होतीं, हवा से भरे असंख्य छोटे-छोटे ब्लेडर इन पौधों को पानी में तैरता हुआ रखते हैं। इन पौधों पर कई प्रकार के अनोखे जन्तु रहते हैं जो संसार में और कहीं नहीं पाए जाते।

सरगासो समुद्र के उत्तर में गल्फ स्ट्रीम नामक गरम पानी की धारा पश्चिम से पूर्व की ओर बहती है और दक्षिण में कॅनरी धारा पूर्व से पश्चिम की ओर बहती है। ये दोनों धाराएं सरगासो समुद्र को एक मथनी की तरह मथती रहती हैं (देखिए मानचित्र)।

नर ईल अधिकतर नदियों के मुहानों पर रहती हैं और मादाएं समुद्र से दूर, नदियों और तालाबों में रहती हैं। जुलाई माह में प्रजनन के लिए परिपक्व ईल मछलियों के सिर पर यह जुनून सवार हो जाता है कि उन्हें हर हालत में सरगासो समुद्र तक पहुंचना है। मादाएं तालाबों से नदियों में, और छोटी नदियों से बड़ी नदियों में होते हुए अटलांटिक महासागर की ओर चल पड़ती हैं। वे रास्ते में पड़ने वाली हर रुकावट को पार करती हुई चलती जाती हैं। यदि पानी न मिले तो ये ज़मीन पर रेंग कर भी नदी तक पहुंचने की कोशिश करती हैं। ऐसे में उन्हें पकड़ना आसान होता है और लाखों मादा ईल मनुष्य व अन्य प्राणियों का भोजन बन जाती हैं। चूंकि नर मुहानों पर रहते हैं, उन्हें समुद्र तक पहुंचने के लिए इतनी मशक्कत नहीं करनी पड़ती।

इस लम्बे प्रवास के दौरान नर और मादा दोनों के पाचन अंग गल जाते हैं ताकि इन्हें न भूख लगे और न भोजन लेने की आवश्यकता पड़े। जीवित बचने वाले ईल यूरोप के किनारे से सरगासो समुद्र तक का छह हज़ार किलोमीटर तक का सफर बिना रुके और बिना भोजन किए तय करने के कारण, अपनी मंज़िल तक पहुंचते-पहुंचते पूरी तरह थक चुके होते हैं। यहां पहुंचते ही गहरे पानी में 400 से 750 मीटर तक की गहराई में हर मादा ईल लाखों की संख्या में अण्डे देती है और नर ईल इन अण्डों पर अपने शुक्राणु छोड़कर इन्हें निषेचित करते हैं। इसके बाद सभी नर और मादा थकान के कारण मर जाते हैं और अण्डे समुद्र की सतह पर तैरने लगते हैं। इन अनगिनत निषेचित अण्डों में से लेप्टोसिफॅलस लार्वा निकलते हैं जो समुद्र की लहरों पर सवार होकर उस स्थान के लिए निकल

अटलांटिक महासागर की विविध जल धाराएं और सरगासो समुद्र।

क्या होती हैं समुद्री धाराएं?

संदेश भेजने का एक पुराना तरीका है - बोतल का उपयोग। यदि कागज़ पर संदेश लिखकर उसे एक बोतल में बंद करके समुद्र में बहा दिया जाए तो वह बोतल समुद्र की धाराओं के साथ बहती हुई कई वर्षों में किसी सुदूर समुद्री तट पर पहुंच जाती है। इसका मतलब यह हुआ कि समुद्र का पानी स्थिर नहीं है, उसमें धाराएं बहती हैं। संसार के समुद्रों में बहने वाली ऐसी सभी धाराओं को पहचान कर उन्हें नाम दे दिए गए हैं। जो धाराएं उत्तरी या दक्षिणी ध्रुव के पास से गुज़रती हैं उनका पानी ठण्डा होता है, जबकि भूमध्य रेखा के पास से शुरू होने वाली धाराओं का पानी गरम होता है।

समुद्र में धारा शुरू होने के तीन कारण होते हैं : हवाएं, पृथ्वी का घूर्णन और पानी की सतहों के घनत्व में अन्तर। समुद्र पर बहने वाली हवाएं पानी की विशाल मात्रा को एक दिशा में धकेलती हुई आगे बढ़ाती हैं। इसी के साथ पृथ्वी

पड़ते हैं जहां से उनके माता-पिता सरगासो समुद्र में आए थे।

पहले तो सभी लार्वा गल्फ धारा के साथ-साथ उत्तर दिशा की ओर बढ़ते हैं किन्तु यूरोपियन ईल के लार्वा शीघ्र ही पूर्व की ओर मुड़कर यूरोप की ओर चल पड़ते हैं। छह हज़ार किलोमीटर की जिस दूरी को तय करने में उनके माता-पिता को केवल छह माह लगे थे, वहीं लार्वा इस दूरी को तीन वर्ष में तय कर पाते हैं। इस दौरान वे छोटे-छोटे समुद्री जीवों को खाकर बड़े होते जाते हैं। तीन वर्ष के बाद यूरोप के किनारे पर पहुंचते-पहुंचते इन लार्वा का आकार लंबा और गोल यानी बेलनाकार हो जाता है। पारदर्शी शरीर होने के कारण इनके आंतरिक अंगों को बाहर से देखा जा सकता है। यही कारण है कि लार्वा की इस अवस्था को ग्लास ईल (Glass Eel) कहते हैं।

ग्लास ईल वह अवस्था है जिसमें ये मछलियां समुद्र को छोड़ने के लिए तैयार हो जाती हैं और नदियों में चढ़ना शुरू कर देती हैं। नर अधिक दूरी तक न जाकर नदियों के मुहानों पर ही रुक जाते हैं, जबकि मादाएं बड़ी नदियों से छोटी नदियों में, और छोटी नदियों से तालाबों तक पहुंच जाती हैं। अगले आठ-नौ वर्षों तक ये वयस्क ईल पर्याप्त मात्रा में भोजन लेते और वृद्धि करते हुए लगभग2 से 2.5 मीटर की लम्बाई तक पहुंच जाते हैं और इनका रंग भी पीला हो जाता है। फिर हर नर और मादा ईल के जीवन में वह समय आता है जब ये अपने जीवन की अंतिम यात्रा पर सरगासो समुद्र की ओर चल पड़ते हैं।

इस अद्‌भुत कहानी का अचंभित कर देने वाला एक और भाग है। अमेरिका के मीठे पानी के स्रोतों में रहने वाली ईल Anguilla rostrata का प्रजनन भी सरगासो समुद्र में ही होता है। किन्तु चूंकि यूरोप की तुलना में अमेरिका सरगासो समुद्र के अधिक निकट है, वयस्क अमरीकी ईल

के घूर्णन के कारण पानी की ये धाराएं घड़ी की दिशा में या घड़ी की दिशा के विपरीत घूमने लगती हैं। जहां ठण्डे और गरम पानी की धाराएं मिलती हैं या एक दूसरे से अलग होती हैं, वहां ठण्डा तथा अधिक नमक (सांद्रता) वाला पानी नीचे की ओर जाता है और गरम व कम नमक वाला पानी ऊपर की ओर उठता है। इस प्रकार ऊपर से नीचे और नीचे से ऊपर भी धाराएं बहने लगती हैं। इन धाराओं के कारण समुद्र का पानी मथा जाता है और समुद्र तल पर पड़े हुए पोषक खनिज पदार्थ उठकर ऊपर की ओर आते हैं। इनके कारण समुद्र की सतह पर अनगिनत सूक्ष्म शैवाल (काई) पनपते हैं जो इन्हीं के समान अनगिनत सूक्ष्म जीवों का पोषण करते हैं। इन सूक्ष्म जीवों को उनसे बड़े जीव, और बड़े जीवों को उनसे बड़े जीव खाते हैं। इस प्रकार समुद्र में एक खाद्य ृंखला बन जाती है। चूंकि मछलियां भी इस खाद्य ृंखला का भाग होती हैं, इन धाराओं में वे बहुतायत में पाई जाती हैं और मछली पकड़ने के संसार के बड़े क्षेत्र इन धाराओं में ही स्थित होते हैं।

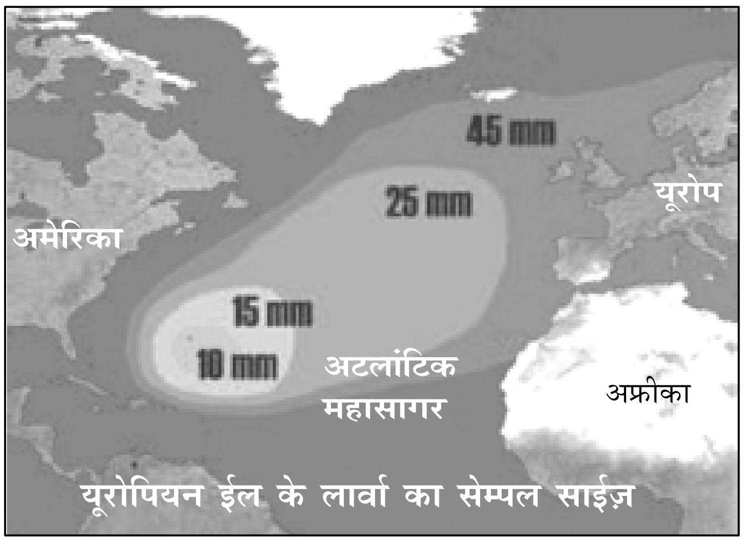
45 mm
यूरोप
25 mm
अमेरिका
15 mm
10 mm
अटलांटिक
महासागर
अफ्रीका
यूरोपियन ईल के लार्वा का सेम्पल साईज़

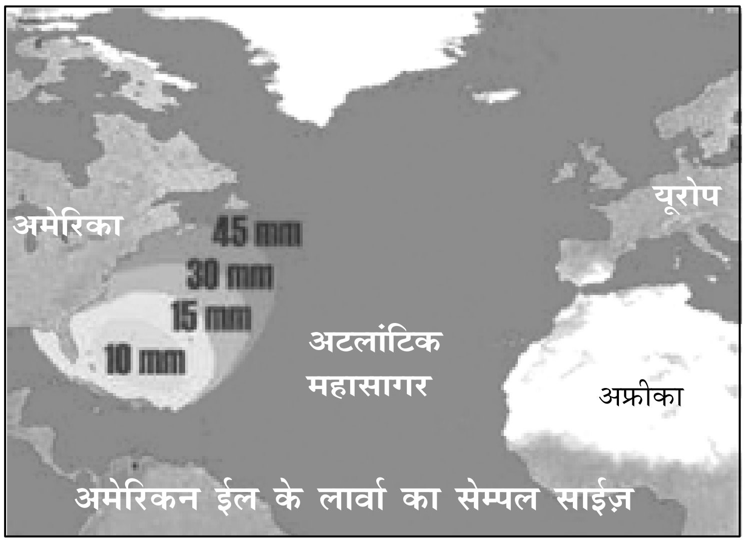
यूरोप
अमेरिका
45 mm
30 mm
15 mm
10 mm
अटलांटिक
महासागर
अफ्रीका
अमेरिकन ईल के लार्वा का सेम्पल साईज़

भारत में भी पाई जाती हैं ईल

ईल मछलियां संसार के हर महाद्वीप में मीठे पानी में पाई जाती हैं। भारत में पाई जाने वाली ईल का जीवशास्त्रीय नाम Anguilla bengalensis है। ज़ाहिर है कि भारतीय ईल भी समुद्र में प्रजनन करती हैं। किन्तु वे प्रजनन के लिए अरब महासागर में जाती हैं या बंगाल की खाड़ी में - इसके बारे में कोई जानकारी नहीं है।

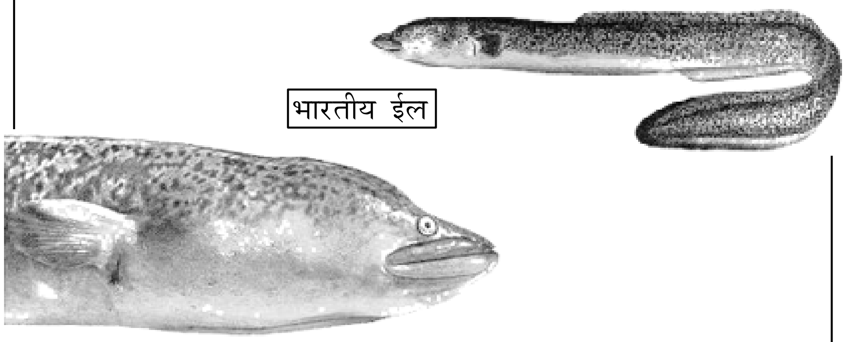

लेप्टोसिफॅलस लार्वा के सेम्पल - 20वीं सदी के शुरुआती दशक में डेनिश प्रोफेसर योहानेस शिमट ने यूरोपीय ईल का प्रजनन स्थल ढूंढने के लिए अटलांटिक महासागर में कई समुद्री अभियानों का सहारा लिया। ये खोजी अभियान यूरोपीय तट से शुरू करके समुद्र में विभिन्न स्थानों पर ईल के लार्वा पकड़ कर उनकी लंबाई मापते थे और अन्य विशेषताएं भी दर्ज़ करते थे। उन्होंने पाया कि यूरोपीय तट के पास लार्वा की लंबाई सबसे ज़्यादा मिल रही थी और जैसे-जैसे वे समुद्र में पश्चिम की ओर बढ़ते जाते थे लार्वा की लंबाई कम होती जा रही थी। 1922 में उन्हें यूरोपीय तट से लगभग छह हज़ार किलोमीटर दूर और अमरीकी तट से लगभग दो हज़ार किलोमीटर दूर सबसे कम लंबाई के लेप्टोसिफॅलस लार्वा मिले। जैसा कि सामने वाले मानचित्र में दिखाया गया है, जहां यूरोपीय ईल के लार्वा की लंबाई तट के पास 45 मिली मीटर थी, सरगासो समुद्र में पाए जाने वाले लार्वा की लंबाई केवल 10 मिली मीटर थी। इस तरह शिमट ने सरगासो समुद्र में ईल मछली का संभावित प्रजनन स्थल खोज निकाला।

बाद की खोजों से अमेरिकन ईल के लार्वा के सेम्पल से भी मालूम हुआ कि सरगासो सागर में लार्वा की लंबाई सबसे कम और उत्तर-पूर्वी अमेरिकी तटों की ओर जाने पर लेप्टोसिफॅलस लार्वा की लंबाई में वृद्धि होती जाती है।

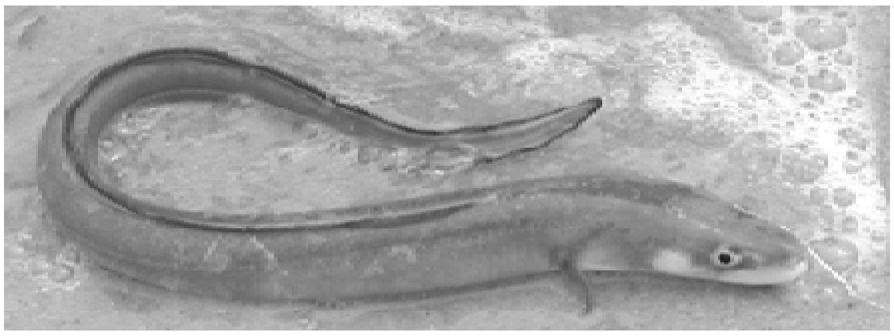

एंग्यूला रोस्ट्राटा - अमेरिकन ईल। अमरीकी नदियों में निवास करती है तथा प्रजनन के लिए सरगासो की ओर रुख करती है।

दो माह में ही वहां पहुंच जाती हैं। लगभग एक ही समय पर दोनों प्रजातियों की ईल मछलियों का प्रजनन सरगासो समुद्र में होता है और दोनों के लार्वा एक ही समय पर अण्डों से निकलते हैं। दोनों प्रजातियों के लार्वा एक साथ गल्फ स्ट्रीम के साथ उत्तर की ओर बढ़ते हैं, किन्तु कुछ समय के बाद अमरीकी ईल के लार्वा पश्चिम की ओर मुड़कर अमेरिका का रुख करते हैं, वहीं यूरोप की ईल के लार्वा जैसा कि ऊपर कहा गया है, पूर्व की ओर मुड़कर यूरोप की ओर चल देते हैं। दूरी कम होने के कारण अमरीकी ईल के लार्वा एक वर्ष में ही तट के पास पहुंच कर ग्लास ईल में बदल जाते हैं और फिर नदियों में चढ़ना शुरू कर देते हैं। रोचक बात यह है कि आज तक कोई अमरीकी ईल यूरोप में नहीं पाई गई है और न यूरोप की कोई ईल अमेरिका में।

वयस्क ईल और लेप्टोसिफॅलस लार्वा अथाह समुद्र में अपनी राह ढूंढते हुए सही स्थान पर कैसे पहुंच जाते हैं यह एक रहस्य बना हुआ है। क्या वे अपना रास्ता सूर्य और तारों की सहायता से खोजते हैं, या पृथ्वी के चुम्बकीय क्षेत्र का सहारा लेते हैं, या फिर इनमें कोई ऐसे अंग होते हैं जो इन्हें प्रवाहों को पहचानने में सहायता देते हैं? इन सवालों के जवाब खोजना एक टेढ़ी खीर है और इसके लिए वैज्ञानिकों को काफी माथापच्ची करनी पड़ेगी।

अरविंद गुप्तेः प्राणीशास्त्र के पूर्व प्राध्यापक, इंदौर में रहते हैं। होशंगाबाद विज्ञान शिक्षण कार्यक्रम एवं एकलव्य से लंबा जुड़ाव रहा है।

प्रवास किसलिए

क्या यह पढ़ना काफी दिलकश नहीं लगता है कि ईल प्रजनन के लिए दुनिया की आधी दूरी नापती है। हम ऐसे काफी सारे प्रवासी पक्षियों के बारे में जानते हैं जो लंबा सफर तय करके भारत में सर्दियों के मौसम में आते हैं और जाड़ा खत्म होते-होते वापस चल देते हैं, जबकि गर्मियों में पसीना बहाने के लिए हम यहीं छूट जाते हैं। जीवों के इस तरह के व्यवहार के पीछे क्या कारण हो सकते हैं? किसी जीव को इससे प्रजनन संबंधी कौन-से फायदे प्राप्त होते हैं? जीवों द्वारा इतनी दूरी तय करने के लिए खर्च की गई ऊर्जा के बारे में भी सोचिए। क्या इससे बेहतर नहीं होता कि जीव इस ऊर्जा का इस्तेमाल ज़्यादा अंडे देने और अपने किशोरों की देखभाल में करते।

हमें यह भी ध्यान रखना होगा कि यहां मामला किसी एक व्यक्तिगत जीव का नहीं है। प्रजनन के लिए योग्य सभी ईल एक साथ, नियत समय पर नदियों से होते हुए समुद्र में एक नियत स्थान के लिए मैराथन धावकों की तरह चल पड़ती हैं। इससे उन्हें क्या फायदा मिलता होगा? यदि हम इस प्रवास को इस नज़रिए से देखें, तो कुछ कारण समझ में आते हैं।

पहला, प्रवास करने वाले जीव अपने जीवन काल में दो अलग-अलग इलाकों से खाद्य संसाधन जुटा पाने में सक्षम होते हैं।

दूसरा, चूंकि ऐसे जीवों की वृद्धि और प्रजनन अलग-अलग इलाकों में होते हैं इसलिए इन्हें अपने कुछ शिकारियों और परजीवियों से छुटकारा पाने में आसानी होती है।

तीसरा, इतनी बड़ी संख्या में एक साथ प्रवास करने की वजह से इस बात की संभावना बढ़ जाती है कि कुछ बच्चे तो बच ही जाएंगे।

यह तीसरी रणनीति उन वनस्पतियों में भी देखने को मिलती है जिनमें एक निश्चित कालावधि के बाद फूल खिलते हैं। जैसे उदाहरण के लिए नीलगिरी का पेड़ - जिसके नाम पर पर्वत ृंखला है - हाल में चर्चा में रहा है। यहां नीलगिरी के दरख्तों पर बारह साल बाद एक साथ बहार आई है। फूल खिलने के बाद बड़ी तादाद में बीज गिरेंगे। इतनी बड़ी तादाद में बीज एक साथ मौजूद होने की वजह से इस बात की संभावना बढ़ जाती है कि इन बीजों के बहुतायत में किसी भोजन ृंखला का हिस्सा बनने के बाद भी काफी सारे बीजों से नए पौधे निकलेंगे।

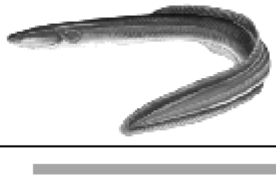

-- उमा सुधीर